श्री शंकर शिक्षायतन

वैदिक शोध केन्द्र

अहोरात्रवादविमर्श

प्रतिवेदन

पण्डित मधुसूदन ओझाजी ने अपने ब्रह्मविज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ के अन्तर्गत ऋग्वेद के नासदीय सूक्त एवं उसके आधार पर ब्राह्मणों, आरण्यकों एवं अन्य परवर्ती वैदिक ग्रन्थों में प्रतिपादित सृष्टिविषयक सन्दर्भों का आलोडन करते हुए उनको आधार बना कर सृष्टिविषयक पूर्वपक्ष के रूप में व्याख्यायित सदसद्वाद, आवरणवाद, व्योमवाद, अम्भोवाद एवं अपरवाद आदि मतों के स्पष्टतया प्रतिपादन हेतु १० वादग्रन्थों का प्रणयन किया है। इन्हीं दस ग्रन्थों में से एक अहोरात्रवाद नामक ग्रन्थ में सृष्टिप्रतिपादक पूर्वपक्ष में रूप में ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में उद्धृत सृष्टिविषयक अहोरात्रवाद का स्पष्टतया प्रतिपादन किया गया है। इसी ग्रन्थ को आधार बनाकर श्री शंकर शिक्षायतन (वैदिक शोध केन्द्र) नई दिल्ली द्वारा दिनांक ३० जुलाई २०२१ को एक राष्ट्रीय वेब संगोष्ठी का समायोजन किया गया। यह समायोजन शिक्षायतन द्वारा सृष्टिविषयक वादग्रन्थविमर्श शृखला के अन्तर्गत प्रवहमान इस वर्ष का सातवां समायोजन था।

अहोरात्रवाद ग्रन्थ में उपलब्ध ७२० कारिकाओं के माध्यम से सृष्टिप्रतिपादक अनेक तत्त्वों पर विचार किया गया है। इस ग्रन्थ में १२ अधिकार हैं। यहाँ अधिकार अध्याय वाचक शब्द है। प्रथम अधिकार का नाम प्रतिज्ञाधिकार एवं अन्त में उपसंहार अधिकार है। इन दो अधिकारों को छोड़ कर शेष १० अधिकारों का उल्लेख पं. ओझाजी नें प्रतिज्ञाधिकार में किया है। ये अधिकार हैं-ज्ञान-अज्ञान, शुक्ल-कृष्ण, ज्योति-अन्धकार, भाव-अभाव, सृष्टि-प्रलय, द्यावा-पृथ्वी, ऋत-सत्य, सप्ताह, यज्ञ एवं चातुर्होत्र-

ज्ञानाज्ञाने, शुक्ल-कृष्णौ च वर्णौ, ज्योतिर्ध्वान्ते, विश्व-भावोऽप्यभावः।
सृष्टि-ध्वंसौ, रोदसी, चर्तसत्ये, सप्ताहो वा यज्ञसामान्यभेदाः।

- अहोरात्रवाद पृ. १, कारिका ४

उपर्युक्त विवेच्य शीर्षक में युग्म तत्त्वों को प्रदर्शित करने का प्रयास पं. ओझा जी ने किया है। उन्होंने इस ग्रन्थ के आदि में प्रतिज्ञाधिकार में इसका स्पष्ट उल्लेख किया। इस संसार में हमें जो कुछ भी ज्ञात होता है वह द्वितत्त्वात्मक है। वह द्वितत्त्व 'अहः' अर्थात् दिन और रात्रि है-

"द्विधा द्विधा सर्वमिदं विभाति द्वैतं ततः कारणमत्र विद्मः ।
द्वाभ्यां बभूवाखिल-विश्वमेतत् विद्यादहोरात्रि-पदेन ते द्वे ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. १ कारिका २

ज्ञानाज्ञानाधिकरण में ज्ञान को विद्या और वही विद्या 'अहः' है। अज्ञान अविद्या है और वही अविद्या रात्रि है-

'ज्ञानं हि विद्या तदहः प्रकाशोऽज्ञानं त्वविद्यास्ति तमश्च रात्रिः ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १ कारिका १

शुक्ल-कृष्णाधिकार में कहा गया है कि संसार में जितने भी रूप हैं, वे सभी रूप इन्हीं दोनों रूपों में समाहित हो जाते हैं। शुक्ल का अर्थ दिन और रात्रि है तथा कृष्ण का अर्थ सन्ध्या है। शुक्ल का अर्थ सफेद और कृष्ण का अर्थ काला है-

"शुक्लं च कृष्णं द्वयमेव रूपं तत्रान्यरूपाणि समर्पितानि ।
शुक्लं त्वहोरात्रिरिदं तु कृष्णं सन्ध्येव रूपाण्यपराणि यानि ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. २ कारिका १

प्रकाश-अन्धकाराधिकार में प्रकाश का अर्थ 'अहः' और अन्धकार का अर्थ रात्रि है-

'प्रकाशमेवाहरिति प्रतीमस्तमस्तु रात्रिं न ततोऽस्ति रिक्तम्।'

- अहोरात्रवाद पृ. २ कारिका १

भाव-अभावाधिकार में सत् और असत् शब्द के माध्यम से अहोरात्रशब्द का विवेचन किया गया है। जिस जगत् का हमें ज्ञान होता है वह जगत् सत् और असत् दोनों तत्त्वों से बना है। सत् शब्द से 'अहः' और असत् शब्द से रात्रि का बोध होता है-

"यावज्जगत् तत् सदहर्विदुस्तत् तमस्तु रात्रिर्यदसत्पुरोक्तम् ।
नाभ्याम् पृथक् किञ्चिदिहास्ति तस्माद् वदाम्यहोरात्रमिदं समस्तम् ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. २, कारिका ४

सर्ग-प्रलयाधिकार को पं.ओझा जी ने कालगणना का आधार बनाया है। इस गणना के माध्यम से युग और मन्वन्तर का निरूपण किया गया है। इस अधिकार में वार्कलि और स्वैदायन आदि वैदिक ऋषियों के अनुसार कालगणना को व्यस्थित करने का प्रयास किया गया है।

द्यावा-पृथिव्यधिकार में द्युलोक को 'अहः' शब्द से एवं पृथिवी को रात्रि पद से व्याख्यायित किया गया है-

'द्यावापृथिव्याविह सृष्टिरूपे सा द्यौरहः सा पृथिवी तु रात्रिः ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १२, कारिका ७

ऋत-सत्याधिकार में स्नेह और तेज शब्द से ऋत और सत्य को प्रस्तुत किया गया है। स्नेह रात्रि है। इसी को ऋत कहा गया है। तेज को अहः और यह अहः सत्य है-

"स्नेहोऽस्ति रात्रिस्त्वहरस्ति तेजः कौषितकिः पश्यति सर्वमाभ्याम् ।
व्याप्तं तयोः स्निग्धमृतं नु तेजः सत्यं नु नाभ्यां परमस्ति किञ्चित् ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. २६ कारिका १

सप्ताहाधिकरण में सूर्य और पृथ्वी को आधार बना कर एक नवीन अवधारणा को पं. ओझा जी ने प्रस्तुत किया है। ये हैं- आवपन, अन्नाद एवं अन्न। आवपन को मन, अन्नाद को प्राण और अन्न को वाक् से व्याख्यायित किया गया है। इन छह तत्त्वों से सूर्य का स्वरूप बनता है-

"यत्सृज्यते तत् त्रिकमेव साकं ह्यन्नादमस्यावपनम् तदन्नम् ।
प्राणो मनो वागिति यत् त्रयं तत् संश्लिष्यते तेन विभाति सूर्यः ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. ३५ कारिका ३

यज्ञाधिकार में अनेक प्रकार से यज्ञ के स्वरूप को प्रतिपादित किया गया है। जिस स्थल पर यज्ञ होता है वह वेदि कहलाता है। यह पृथ्वी यज्ञ की वेदि है। गृहस्थ जिस अग्नि का उपासना करता है वह गार्हपत्य अग्नि कहलाता है। सभी प्रकार की आहुति को स्वीकार करने वाला अग्नि आहवनीय अग्नि है। यह पृथ्वी के पश्चिम भाग में रहता है-

"इयं हि पृथ्वी प्रथमास्ति वेदिस्तत्पश्चिमे तिष्ठति गार्हपत्यः ।
प्राच्यां दिशि त्वाहवनीय एष प्रहूयते यत्र च सोमरश्मि ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. ४८, कारिका ९०

चातुर्होत्र अधिकार में चातुर्होत्र याग का प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार अनेक विषयों के माध्यम से यह अहोरात्रवाद ग्रन्थ सृष्टि विषयक विविध सिद्धान्तों से परिपूर्ण है।

संगोष्ठी के मुख्य वक्ता **डॉ. चित्तनारायण पाठक,** प्राचार्य, निर्मल संस्कृत महाविद्यालय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय ने अहोरात्रवाद ग्रन्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है कि इस जागतिक संसार में जो भी कार्य होता है वह दिन अथवा रात्रि में ही होता है। इसी अभिप्राय से अहोरात्र सृष्टि का प्रतिपादक तत्त्व है। उन्होंने कहा कि जीवात्मा का परमात्मा के साथ किस प्रकार का सम्बन्ध होता है। अथवा किस सम्बन्ध से यह सृष्टि होती है। इसको प्रतिपादित करते हुए अहोरात्रवाद नामक ग्रन्थ में पं. ओझाजी ने तीन संबन्धों को उद्घाटित किया है। ये सम्बन्ध हैं- बन्ध संबन्ध, विभूति संबन्ध और योग संबन्ध। दो तत्त्वों परस्पर मिलन से एक तृतीय सत्ता की सृष्टि होती है। यही बन्ध संबन्ध कहलाता है। इसमें पूर्व के दोनों तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। जिस संबन्ध का वर्णन इन्द्रिय से संभव नहीं है, वह विभूति सम्बन्ध कहलाता है। जैसे- आत्मा और अनात्मा संबन्ध, आकाश और वायु का संबन्ध। योग संबन्ध ही यज्ञ संबन्ध है। जिसमें दो तत्त्वों के मिलन से यज्ञ होता है। संपूर्ण सृष्टि ही यज्ञ है।

विशिष्ट वक्ता के रूप में विषय को उद्घाटित करते हुए **डॉ. कुलदीप कुमार,** सहायकाचार्य, संस्कृतविभाग, हिमाचल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला ने कहा कि सूर्य

और पृथिवी के क्रम को व्याख्यायित करते हुए पं. मधुसूदन ओझा जी ने अनेक मत मतान्तरों को प्रस्तुत किया है। पृथ्वी और सूर्य में इन दोनों की गति और स्थिति के विषय में पं. ओझा जी ने अहोरात्रवादग्रन्थ में चार सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। प्रथम सिद्धान्त के अनुसार इस जगत् में सूर्य स्थिर है और पृथ्वी चन्द्रमा के साथ घूमती है-

'सूर्यस्थिरस्तिष्ठति विश्वमध्ये चन्द्रेण साकां भ्रमतीह पृथ्वी ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १४ कारिका ३२

द्वितीय सिद्धान्त के अनुसार द्यावा और पृथ्वी दोनों ही साथ-साथ गतिशील हैं। इन दोनों में किसी एक की गति नहीं है-

'द्यावापृथिव्योस्तु यदाह रेणुः स्तम्भं मिथस्तेन गतिर्न पृथिव्याः।'

- अहोरात्रवाद पृ. १४, कारिका ३७

तृतीय सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी एक वर्ष में सूर्य का चक्कर लगाती है। वह पृथ्वी अपनी धूरी पर घूमती हुई एक दिन में चक्कर काटती है-

"यथा च पृथ्वी परितोंऽशुमन्तं भूयः परिक्राम्यति वत्सरेण ।
तथा स्वनाभिं परितोऽहनी सा पृथ्वी च सूर्यश्च परिक्रमेते ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. १५ कारिका ४१

चतुर्थ सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी और सूर्य के विवर्त रूप से दिन और रात होता है। यह विचार अगस्त्य ऋषि का है। यहाँ विवर्त का अर्थ विस्तार है। अर्थात् सूर्य और पृथ्वी के विस्तार से सामान्य जन को दिन और रात का बोध होता है-

"विवर्तते यद्वदियं तु पृथ्वी तु विवर्तते यद्वदयं च सूर्यः ।
तत्राहनी भिन्नवदेव क्लृप्ते तथा ह्यवोचद् भगवानगस्त्यः ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. १५ कारिका ४९

विशिष्ट वक्ता के रूप में द्यावा और पृथ्वी के स्वरूप विषय पर बोलते हुए **डॉ. विश्वेश**, सहायकाचार्य, संस्कृतविभाग, महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार ने कहा कि ओझाजी ने द्यौविषयक दो मतों का उल्लेख किया है। प्रथम मत के अनुसार द्यौ का अर्थ सूर्य, चन्द्रमा, तारा और ग्रहों से युक्त आकाश है-

"द्यौः कोऽर्थ इत्यत्र मतद्वयं स्यात् प्राधान्यतस्तत्र च केचिदाहुः ।
सूर्येन्दु-तारा-ग्रह-संकुलाङ्गं यद् दृश्यते व्योम तदस्ति सा द्यौः ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. १८ कारिका १

द्वितीय मत के अनुसार द्यौ का अर्थ संवत्सर है। सूर्य का प्रकाश जितने दूर तक व्याप्त रहता है उतना स्थान सौरमण्डल कहलाता है। यह सौरमण्डल ही द्युलोक कहलाता है-

'द्यौरेष संवत्सर उच्यते रवेर्यावान् प्रकाशः परितः प्रवर्तते ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १८ कारिका २

डॉ. प्रवीण कुमार द्विवेदी, सहायकाचार्य, संस्कृतविभाग, प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया)विश्वविद्यालय, प्रयागराज ने अपने विशिष्ट वक्तव्य में कहा कि ज्ञानाज्ञानाधिकार में

पं. ओझा जी ने ज्ञान के तीन स्वरूपों का प्रतिपादन किया है। पहले स्थान पर क्षर तत्त्व है, दूसरे स्थान पर अक्षर तत्त्व है और अन्तिम स्थान पर निर्विशेष है-

'ज्ञानं त्रिधास्ति क्षरमक्षरं परं तेषां परं निर्विषयं सदैकवत् ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १ कारिका २

अक्षर तत्त्व ही आत्मा है। वही ईश्वर है। वही ईश्वर आप्तकाम है। आप्तकाम का अर्थ है संपूर्ण कार्यों को नियन्त्रित करने वाला नियन्ता-

'सर्वाप्तकामोऽखिल-धर्मसङ्घोपपन्न आत्माक्षर ईश्वरः सः ।'

- अहोरात्रवाद पृ. १ कारिका ४

विशिष्ट वक्ता **डॉ. प्रतिभा आर्या**, सहायकाचार्या, संस्कृतविभाग,जगत तारण महिला महाविद्यालय, इलाहावाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज ने सर्ग और प्रलय विषय पर व्याख्यान करते हुए कहा कि सृष्टि और प्रलय किसी काल खण्ड में ही संभव है। पं. ओझा जी ने ब्रह्म को कालस्वरूप माना है। जो अनादि अर्थात् जिसका आदि न हो, अनन्त अर्थात् जिसकी गणना न हो सके, ध्रुव अर्थात् जो निश्चित हो, जो तर्क से रहित हो, जो जगत् का आधार एवं बीजस्वरूप हो, जिसका जन्म न हुआ हो, वार्धक्य आदि क्षय रूप से रहित हो वह ब्रह्म है। ब्रह्म ही काल है-

"अनाद्यनन्तं ध्रुममप्रतर्क्यं परायणं यज्जगतोऽस्य बीजम् ।
अजं पुराणैरजरं यदाहुस्तद्ब्रह्म तं कालमहं वदामि ॥"

- अहोरात्रवाद पृ. ४ कारिका १

काल की गणना क्रम में मन्वन्तर एवं काल के क्षण, निमेष, काष्ठा आदि कालवाचक सूक्ष्म तत्त्वों का पौराणिक एवं वैदिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए श्री शंकर शिक्षायतन के समन्वयक तथा संस्कृत एवं प्राच्यविद्या अध्ययन संस्थान, जे.एन.यू. के संकाय प्रमुख **प्रो. सन्तोष कुमार शुक्ल**, ने कहा कि इस ग्रन्थ का आधुनिक वैज्ञानिकों के विश्लेशण पद्धति से एवं प्रायोगिक दृष्टि से अध्ययन अपेक्षित है। उन्होंने अहोरात्रवाद ग्रन्थ के संपादक श्रीआद्यादत्त ठाकुर जी के संस्कृत वक्तव्य को उद्घाटित करते हुए कहा कि अहोरात्रपद के दस अर्थ हैं- शुक्ल-कृष्ण, प्रकाश-अन्धकार, सर्ग-प्रलय, भाव-अभाव, ऋत-सत्य, यज्ञ आदि है। इन्हीं दस तत्त्वों से यह सृष्टि बनी है-

'इमे अहोरात्रे इति जिज्ञासायां ग्रन्थेऽस्मिन् दशधा अहोरात्रशब्दार्थो विवृतः ।

- अहोरात्रवाद, भूमिका पृ. ४

इस एक दिवसीय राष्ट्रीय वेब संगोष्ठी का संचालन **डॉ. लक्ष्मी कान्त विमल**, वरिष्ठ शोध अध्येता, श्री शंकर शिक्षायतन ने तथा धन्यवाद ज्ञापन **डॉ. मणि शंकर द्विवेदी**, वरिष्ठ शोध अध्येता, श्री शंकर शिक्षायतन ने किया । कार्यक्रम का शुभारम्भ वैदिक मङ्गलाचरण से एवं समापन शान्तिपाठ से हुआ। इस कार्यक्रम में देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं अन्य प्रतिष्ठित शैक्षणिक संस्थानों के शताधिक प्राध्यापकों एवं शोधार्थियों ने अपनी सक्रिय सहभागिता से इस कार्यक्रम को सफल बनाया।